नोबेल पुरस्कार की अंदरूनी कहानी

शशिधर खां

आमतौर पर समझा जाता है कि नोबेल पुरस्कार पाने वाला व्यक्ति अवश्य ही कोई विशिष्ट प्रतिभा वाला होगा, क्योंकि ऐसी धारणा बन गई है कि विश्व में अत्यंत आदर और प्रतिष्ठा की दृष्टि से देखा जाने वाला यह पुरस्कार विश्व-साहित्य की श्रेष्ठतम कृतियों को दिया जाता है।

संसार की उत्कृष्ट रचनाओं के अध्येता कमोवेश इस बात से अवगत हैं कि कई महान साहित्यकार हुए हैं, जो अपनी लेखनी के माध्यम से जन-जन के चितेरे बन गए, मगर नोबेल पुरस्कार के रूढ़िवादी पोंगापंथियों के दृष्टिकोण में उनका सही मूल्यांकन नहीं हो पाया। साहित्य को पढ़ने जानने वालों को इस बात की जानकारी तो थी कि अपने लेखन, कौशल के चमत्कार से विश्व जन मानस पर छा जाने वाली तीन विभूतियों को नोबेल पुरस्कार से वंचित कर दिया गया था, मगर इसके पीछे पूर्वाग्रह से ग्रसित जो दकियानूसी विचारधारा काम कर रही थी, उसका विस्तृत विवरण पहली बार प्रकाश में आया है और इसका श्रेय भी नोबेल पुरस्कार अकादमी के एक सदस्य को जाता है।

इस बेइंसाफी का शिकार होने वाले साहित्याकाश के ये तीनों जाज्वल्यमान नक्षत्र हैं— लेव तोल्सतोय, टॉमस हार्डी और ग्राहम ग्रीन। लिखने-पढ़ने वाला शायद ही कोई व्यक्ति ऐसा हो, जिसने इनका नाम न सुना हो। इन तीनों का नाम प्रस्तावित करने के बाद इनकी जगह अन्य व्यक्तियों को पुरस्कार दे दिए गए, जिनके बारे में आज भी किसी को कुछ पता नहीं है।

लेव तोल्सतोय की जगह थियोडोर मॉम्मसेन, टॉमस हार्डी की जगह पाल हेईस और ग्राहम ग्रीन की जगह मिग्वेल एंजेल आँस्यूरियस को नोबेल पुरस्कार क्यों दिया गया?

नोबेल पुरस्कार अकादमी के एक सदस्य जेल एस्पमार्क ने अपनी हाल में छपी पुस्तक, "नोबेल पुरस्कार निर्णयों के पीछे सिद्धांत व मान्यताएं" में यह सवाल उठाया है। इस सवाल के जवाब में उन्होंने जो कुछ कहा है उसे पढ़ कर हमें नोबेल पुरस्कार के विषय में अपनी अब तक की धारणा बदलने को विवश होना पड़ा है।

एस्पमार्क का कहना है कि नोबेल अकादमी का इतिहास इसके अध्यक्ष तथा निर्णायक समिति के सदस्यों की अस्पष्ट आकांक्षाओं को थोपने की साजिशों से भरा पड़ा है। उनके अनुसार तत्कालीन राजनीतिक, सामाजिक वातावरण के हिसाब से निर्णायकों के निजी दृष्टिकोण बदलते रहे हैं और उसका सीधा असर विश्व की इस एकमात्र सबसे बड़ी सम्मानित संस्था पर पड़े बिना नहीं रह सका। जिन पुस्तकों की विषय वस्तु उनके विचारों से मेल नहीं खाई, उनकी बिल्कुल उपेक्षा कर दी गई।

ऐल एस्पमार्क स्वयं भी प्रखर कवि, आलोचक और साहित्यिक इतिहासवेत्ता हैं। इसके साथ ही वह नोबेल अकादमी निर्णायक समिति के सदस्य भी हैं। इसलिए उन्हें इस संबंध में काफी नजदीक से जानने-समझने का मौका मिला है। उन्होंने रोंगटे खड़े कर देने वाले तथ्य प्रकट किए हैं।

रूढ़िवादी विचारों के इन निर्णायकों ने नोबेल पुरस्कार के संस्थापक और डायनामाइट के आविष्कार आल्फ्रेड नोबेल की मूल भावना की बिल्कुल उपेक्षा कर दी। आल्फ्रेड नोबेल ने अपने वसीयतनामे में लिखा था कि यह पुरस्कार सही अर्थ में सर्वोत्कृष्ट कृतियों को दिया जाना चाहिए।

पचास वर्षों के बाद अकादमी के कार्यकलापों के रिकार्ड जनसुलभ किए गए हैं। इससे किसी भी जिज्ञासु के लिए यह जान पाना संभव हो गया है कि किन हालातों में अमुक व्यक्ति को पुरस्कार के लिए चुना गया और किन कारणों से किन्हीं का नाम निर्णायकों ने अपनी सूची से निकाल दिया। रिकार्ड से पता चलता है कि टॉमस हार्डी की नायिकाओं में धार्मिक और नैतिक आदर्शों की कमी थी। यह कहना था निर्णायकों का और इसी वजह से हार्डी के स्थान पर जर्मनी के लेखक पॉल हेईस को पुरस्कार दिया गया। हेईस का नाम जर्मनी में भी लोग नहीं जानते थे।

फ्रांसीसी उपन्यासकार एलिम जोला को उनके एक विक्षिप्त प्रकृतिवादी होने के कारण काट दिया गया और उनकी जगह नार्वे के नाटककार अपने नकारवाद के चलते पुरस्कृत हुए।

स्वीडन के महान लेखक ऑगस्ट स्ट्रिंवर्ग हमेशा अपने ही देश की व्यवस्था के विरोधी रहे। उनके नाम पर कभी विचार तक नहीं किया गया और यही बात बर्टेंडरसेल के समकालीन जोसेफ कोनराड के साथ हुई।

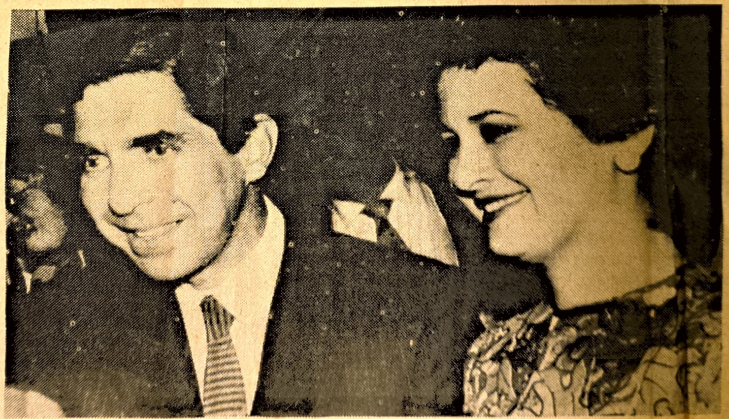
आरंभ के अधिकांश विजेताओं के नाम और शोहरत की दुनिया तो इतनी संकीर्ण थी कि साहित्यिक इतिहासकारों ने उनका कहीं उल्लेख तक नहीं किया। ये लेखक हैं— सली प्रधोम्मे, मॉरित मेटर्लिक और हेनरी पोटोप्पिडन।

एस्पमार्क ने इसे अकादमी का दुर्भाग्य कहा है। उसके अनुसार जो संस्था नए विचारों का क्षेत्रीय स्तर पर विरोध करने का एक महत्वपूर्ण मंच बन गई हो, वही इतने सम्मानजनक अंतरराष्ट्रीय साहित्य पुरस्कार का नीति-निर्धारण करती है।

१९२० में रूढ़िवादी सदस्यों के विरुद्ध अभियान शुरू हुआ और प्रगतिशील विचारों की नई पीढ़ी के व्यक्तियों ने निर्णायक मंडल में प्रवेश किया। उन्होंने आल्फ्रेड नोबेल की इच्छा को और भी उदारवादी पुट दे दिया। उन पर ब्रिग्रिद्रों से ग्रसित व्यक्ति हावी नहीं हो पाए। उसी का परिणाम था जार्ज बर्नार्ड शॉ और डब्लू. बी. यीट्स को नोबेल पुरस्कार मिला जिनके नाम पूर्व निर्णायकों ने अस्वीकृत कर दिए थे।

संस्था को और अधिक लोकप्रिय तथा उदार बनाने के लिए निर्णायकों ने जॉन गाल्सवर्दी और पर्ल एस. बक को पुरस्कार दिया। "गान विद द विन्ड" के लेखक मारगरेट मिशेल का नाम भी विचारार्थ रखा गया।

द्वितीय विश्व युद्ध की समाप्ति से पहले तक हर्मेन हेस्से, एंद्रे गिड, टी.एस. इलियट और विलियम फॉकनर के नामों पर विचार नहीं किया गया था। १९३६-४९ की अवधि में सर्वत्र उन्हीं की चर्चा थी। अकादमी के अंदर नई पीढ़ी आई तो, पर इसके आने में काफी देर हो चुकी थी। क्योंकि तब तक जेम्स ऑयल, फ्रेंज काफका, डी. एच. लॉरेंस और मार्सेल प्राउस्ट सरीखे साहित्य के अद्वितीय महारथियों की मृत्यु हो चुकी थी।



कोस्टारिका के राष्ट्रपति आस्कर एरियास सांचेज अपनी पत्नी के साथ। इन्हें १९८७ का नोबेल पुरस्कार (शान्ति) देने की घोषणा की गई है।

नोबेल अकादमी की युद्ध के बाद के वर्षों की उपलब्धियां अनमोल धरोहर हैं। इस अवधि को अकादमी के इतिहास का स्वर्णिम काल माना गया है। इस समय एक ओर जहां साहित्य जगत के युगान्तरकारी पुरोगामियों, अर्नेस्ट हेमिंग्वे, अल्बर्ट कामू और सैमुएल बेकेट को पुरस्कार पाने वालों में शामिल किया गया, वहीं दूसरी ओर बर्टेंड रसेल, विस्टन चर्चिल और ज्यांपॉल सात्र को पुरस्कृत कर अकादमी की प्रतिष्ठा कई गुनी बढ़ गई।

१९७० के दशक में अकादमी पर पुनः असंगत तत्वहावी हो गए। नए सदस्यों की नई नीति के अनुसार साहित्य संसार में हलचल मचाने वालों को पुरस्कार देने का विचार त्याग दिया गया और राजनेताओं, भाषाओं, शैलियों तथा संस्कृतियों को पुरस्कृत किया जाने लगा। अकादमी के एक प्रभावशाली सदस्य आर्थर लुंकविस्ट ने बड़ा जोर देकर कहा था कि पुरस्कार का मुख्य उद्देश्य उन प्रतिभाओं का सम्मान करना है, जिन्हें अपेक्षित मान्यता प्राप्त नहीं हुई है। अकादमी की निर्णायक समिति का यही अकेला सदस्य था, जिसने १९६७ में, पाश्चात्य उपन्यास जगत में अपनी रचनाओं से अपार लोकप्रिय माने जाने वाले लेखक ग्राहम ग्रीन के नाम का अंत तक विरोध किया। उस वर्ष का पुरस्कार ग्राहम ग्रीन के बजाए ग्वाटेमाला के रचनाकार मिग्वेल एंजेल अस्यूरियस को दिया गया।

तत्पश्चात निर्णायकों की नीति-शैली में थोड़ा-सा बदलाव आया। १९७३ में आस्ट्रेलिया के पैट्रिक ह्वाईट और १९८६ में नाजीरिया के बोल सोईका को पुरस्कार मिलने के बाद यह बात स्पष्ट रूप से सामने आई।

१९०२ में लेव तोल्सतोय के स्थान पर एक मामूली इतिहासकार को नोबेल पुरस्कार देकर अकादमी पर निर्णायकों ने चिरकाल के लिए काला धब्बा लगा दिया। तोल्सतोय के स्थान पर जर्मनी के थियोडोर मॉमसेन को पुरस्कार मिला। उसने रोम के इतिहास पर एक पुस्तक लिखी थी, जिसके आधार पर उसे तत्कालीन जीवित इतिहासकारों में सबसे महान बताया गया। स्थापना के बाद अकादमी का यह दूसरा पुरस्कार था। हाल के वर्षों में भी नोबेल अकादमी की ओर से चुने गए कुछ नामों को लेकर विश्व भर में इसकी कटु आलोचना होती रही है।

नोबेल अकादमी अपनी वार्षिक पुरस्कार सूची अत्यंत गोपनीय रखती है। इस वर्ष पुरस्कार पाने वालों में मैक्सिको के ओक्टेवियो पाज और कालोस फुएंटेस, पेरू के मारियो वर्गास लोसा अमरीका के जॉयस कारोल ओएट्स, पश्चिम जर्मनी के गुएंटर ग्रास और स्विट्जरलैंड के मैक्स फिश के नामों की चर्चा है। मगर अकादमी के नजदीकी जानकारों को इसकी नीतियों के प्रति इतनी विरक्ति हो गई है कि उन्हें उपरोक्त नामों में से एक को भी पुरस्कार मिल पाएगा, इसमें संदेह है। उनका अनुमान है कि अकादमी किसी अजनबी कवि को पुरस्कृत कर विश्व को शायद चौंका देगी और संभवतः वह कवि सोवियत संघ का हो।

चाहे जो भी टीका-टिप्पणियां हों, मगर यह निर्विवाद रूप है कि नोबेल अकादमी विश्व की एकमात्र संस्था है, जहां से पुरस्कृत होने के बाद व्यक्ति रातोंरात विश्व-व्यक्तित्व बन जाता है। अकादमी के निदेशक बैरन रामेल की यह उक्ति शत प्रतिशत सही है कि "नोबेल पुरस्कार बौद्धिकों का ओलंपिक वर्णपदक है।"